International Journal of Applied Research 2017; 3(9): 684-687

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(9): 684-687
www.allresearchjournal.com
Received: 13-07-2017
Accepted: 25-08-2017

डॉ० विजय कुमार
हिन्दी-विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Correspondence
डॉ० विजय कुमार
हिन्दी-विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

खुसरो की परम्परा और नज़ीर अकबराबादी

डॉ० विजय कुमार

शोध सारांश
भारत की सामासिक संस्कृति के लिए धार्मिक कट्टरता एक चुनौती रही है। मुसलमानी राज्य स्थापित होने के उपरान्त मुस्लिम बादशाहों का हिन्दुओं के प्रति रवैया क्रूरतापूर्ण रहा। हिन्दू और उनके पूजास्थल सदा उसके निशाने पर रहे। परन्तु उन्हीं आक्रमणकारियों के साथ आये सूफी संतों ने इस्लाम की एक नई छवि प्रस्तुत की। उनकी विचारधारा ईरानी तसव्वुफ से प्रभावित थी और उनका दृष्टिकोण मानवतावादी था। अपने धर्म के आचरण को अपनाते हुए वे दूसरे धर्म के अनुयायिओं के साथ प्रेम का संबंध रखते थे। वे 'प्रेम का पीर' जगाकर कर सभी को उस परम ईश्वर की ओर ले जाना चाहते। अमीर खुसरों भी एक सूफी संत और कवि थे जो हजरत निजामुद्दीन औलिया के शिष्य थे। अमीर खुसरो फारसी के विद्वान थे और ईरानी रहस्यवाद में आस्था रखते थे परन्तु भारत भूमि, भारतवासी, भारत की भाषा से उन्हें अगाध प्रेम था। धार्मिक कट्टरता के दौर में अमीर खुसरो ने अपनी कविता के माध्यम से हिन्दुओं के प्रति सौहार्द का पैगाम भेजा और हिन्दुओं में इस्लाम के प्रति धारणा बदली। अमीर के इस प्रयास ने हिन्दी–उर्दू के परवर्ती कवियों को दूर–दूर तक प्रभावित किया। हिन्दी में कबीर आदि संत कवियों, सूरदास आदि भक्त कवियों, जायसी आदि प्रेममार्गी कवियों ने अमीर खुसरो की परम्परा को आगे बढ़ाया तो उर्दू में आगे चलकर कई महत्त्वपूर्ण कवि हुए जिन्होंने इस परम्परा को मुरझाने से बचाया। इन्हीं कवियों में एक थे – नज़ीर अकबराबादी। वे आम जनता के कवि थे। उनका मेल–जोल साधारण हिन्दू जनता से था। इसी का परिणाम था कि वे हिन्दुओं के रीति–रिवाज संस्कार, पर्व–त्याहारों को नजदीक से देखा। उन्होंने गंगा–जमुनी तहजीब को बल प्रदान करने के लिए मुसलमानों के साथ–साथ हिन्दुओं के लिए भी कविताएँ लिखी। हिन्दुओं पर उनकी कविता का साकारात्मक प्रभाव पड़ा, वे मुसलमान भाईयों के कुछ और करीब आये, साम्प्रदायिक सौहार्द मजबूत हुआ। आज संकट की घड़ी में नज़ीर अकबराबादी हमारे लिए बहुत प्रासंगिक हो गये है, क्योंकि राष्ट्रीय अन्तर–राष्ट्रीय स्तर पर चल रही धर्म की राजनीति भाईचारा पर चोट कर रही है।

कूटशब्द: भारतीय साहित्य, नज़ीर अकबराबादी, भारत भूमि, भारतवासी, 'प्रेम का पीर'

आलेख
भारतीय साहित्य तथा समाज के क्षेत्र में जिस परम्परा ने अपने मानवतावादी दृष्टिकोण से भारतीय जनता को सबसे अधिक प्रभावित किया है; जिस परम्परा के मार्ग में अनेक बाधाएँ आती रहती है तथा उनके टूट जाने का खतरा हमेशा बना रहता है, वह परम्परा है गंगा–जमुनी तहजीब की परम्परा अर्थात् हिन्दू–मुस्लिम भाईचारा की परम्परा जिसके प्रवर्तक प्रसिद्ध सूफी संत हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया के शिष्य अमीर खुसरो (1253–1325 ई०) थे।

आरंभ के मुस्लिम शासकों की हिन्दू धर्म के प्रति जो क्रूरतापूर्ण नीति थी वह किसी से छिपी नहीं है परन्तु इन सूफ़ी संतों ने इस्लाम का दूसरा रूप प्रकट किया जिसमें हिन्दुओं के प्रति कोई शत्रुता का भाव नहीं था। सूफ़ी संत आचार तो अपने धर्म का करते थे परन्तु मानव मात्र के हृदय में प्रेम की पीर जगाकर उसे ईश्वर की ओर उन्मुख कर रहे थे। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर का मानना है कि भारत में इस्लाम के प्रति आकर्षण सूफ़ी संतों के कारण हुआ। वे ईरानी तसव्वुफ (रहस्यवाद) से प्रभावित थे। भारत में "ईरानी तसव्वुफ भारतीय वेदान्त के प्रभाव में बढ़ा, अतएव जब वह भारत पहुँचा उस देश में उसे तैयार जमीन मिल गयी। यह नया धर्म बहुत से भारतवासियों को परम अनुकूल दिखाई दिया।"[1] दिनकर भी मानते हैं कि हिन्दू–मुस्लिम एकता का मार्ग और कोई नहीं, भारत की राष्ट्रीयता का मार्ग है और इस राष्ट्रीयता की आवश्यकता की अनुभूति सर्वप्रथम अमीर खुसरो को हुई थी।

अमीर खुसरो फारसी, तुर्की और अरबी के प्रकाण्ड पंडित थे परन्तु अपनी मातृभाषा 'हिन्दवी' से बहुत प्यार करते थे। उन्होंने अपने को भारतीय तुर्क कहकर हिन्दवी भाषा की मिठास का वर्णन किया है –

"तुर्क–ए–हिन्दुस्तानियम मन हिन्दवी गोयम जवाब,
चु मन तूती–ए–हिन्दम अज़ रास्त पुरसी।
जे मन हिन्दवी पुरस ता नग्ज़ गोयम,
शकर मिस्री न दारम कज़ अरब गोयम सुखन।"[2]

अमीर खुसरो 'हिन्दवी' में, जिससे बाद में उर्दू और हिन्दी का विकास हुआ, रचना करने वाले प्रथम कवि थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी स्वीकार किया है कि "पहेलियों, मुकरियों तथा दो सुखनों में खुसरो ने ठेठ खड़ी बोलचाल का प्रयोग किया है।"[3]

अमीर खुसरो ने सूफ़ी विचारधारा से ओत–प्रोत तरह–तरह के गीत लिखे। बसंत, सावन, बरखा फागुन, चैत, पनघट डिंडोला, होली, राम–कृष्ण की भक्ति, चक्की, शादी–ब्याह, विदाई, बाबुल, साजन, विरह, लोक्तियाँ, ईश आराधना के गीत तथा कव्वालियाँ आज भी लोकप्रिय है। ये गीत हिन्दुओं के रीतिरिवाज तथा हिन्दू संस्कृति से जुड़े हुए हैं। दिनकर जी ने अमीर खुसरो के साहित्य तथा उनकी विचारधारा की प्रशंसा करते लिखा है–

"भारत पर इस्लामिक राज्य के आरंभ के केवल एकसठ साल बाद भारत ने उस मुसलमान को जन्म दे दिया जो हिन्दुस्तान के राष्ट्रवादी मुसलमानों का अग्रणी महापुरुष था।"[4] उन्होंने भारत की जमीं को अपनी मातृभूमि और देश माना। उन्होंने भारत के सामने बसरा, तुर्की, रूस, चीन, खुरासान, मिश्र, कंधार सबको तुच्छ बतलाया। दिनकर जी ने यह भी कहा है कि "यदि खुसरो को हिन्दुस्तान ने अपने आदर्श मुसलमान के रूप में उछाला होता तो हिन्दुस्तान की कठिनाइयों कुछ–न–कुछ कम हो जाती।"[5]

अमीर खुसरो की इस परम्परा को हिन्दी में संत कवियों, प्रेममार्गी कवियों तथा भक्त कवियों ने आगे बढ़ाया तो उर्दू में कुतुबअली; फ़ाईज तथा नज़ीर अकबरावादी जैसे कवियों ने। दिनकर जी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता के तीन बड़े नेताओं में कबीर, अकबर तथा महात्मा गांधी को आदर दिया है। महात्मा गांधी सभी धर्मों का सम्मान करते थे, किसी को छोटा या बड़ा नही मानते थे। अकबर की दृष्टि में कोई धर्म पूर्ण नहीं था। वे सभी धर्मों के अच्छी बातों को लेकर आगे बढ़ना चाहते थे। कबीर इस्लाम और हिन्दुत्व दोनों को अधूरा मानते हुए आत्म–धर्म के स्तर पर उठने का उपदेश दिया करते थे जहाँ मस्जिद–मंदिर का कोई विवाद ही नही है। उन्होंने सामाजिक घरातल पर भी हिन्दू–मुस्लिम एकता का प्रयास किया। वस्तुतः इस क्षेत्र में कबीर भी अमीर खुसरो की परम्परा को लेकर आगे बढ़े। इसलिए दिनकर भी कहते हैं कि "कबीरदास भी सूफी ही थे, किन्तु वे तसव्वुफ के उस रूप के कवि हुए जिसपर हठयोग और वेदान्त का पूरा प्रभाव था। तसव्वुफ की एक दूसरी धारा के भारत में अनेक कवि हुए हैं जो प्राय: सब के सब मुसलमान थे और जो, किसी–न किसी प्रसिद्ध सूफ़ी फकीर की शिष्य परम्परा में पड़ते थे। इन कवियों के शिरोमणि मलिक मुहम्मद जायसी हुए जो शेरशाह के समकालीन थे।"[6]

'पद्मावत' जायसी की कालजयी रचना है जिसमें कवि ने राजा रतन सेन और रानी नागमती की कथा के माध्यम से सूफ़ी संम्प्रदाय की मान्यता को सुन्दर ढंग प्रस्तुत किया गया है और इस काव्य में वर्णित लोकतत्व और सांस्कृतिक चेतना हिन्दू समाज को अपनी ओर आकर्षित करने में पूर्ण सक्षम है। जायसी ने हिन्दू जन–जीवन को निकट से देखा था। उन्होंने हिन्दुओं के लोकाचार, संस्कार तथा जीवन-पद्धति का सुन्दर चित्रण किया है। जायसी और अन्य प्रेममार्गी कवियों के सामाजिक–सांस्कृतिक अवदान के संबंध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने ठीक ही कहा है कि "अपनी कहानियों द्वारा इन्होंने प्रेम का शुद्ध मार्ग दिखाते हुए उन सामान्य जीवन दशाओं को सामने रखा जिसका मनुष्य मात्र के हृदय पर एक प्रभाव दिखाई पड़ता है। हिन्दू ह्रदय और मुसलमान हृदय आमने–

सामने करके अजनबीपन मिटाने वालों में इन्हीं का नाम लेना पड़ेगा। इन्होंने मुसलमान होकर हिन्दुओं की कहानियाँ हिन्दुओं की ही बोली में पूरी सहजता से कहकर उनके जीवन की मर्मस्पर्शिनी अवस्थाओं के साथ अपने उदार हृदय का पूर्ण सामंजस्य दिखा दिया। कबीर ने केवल भिन्न प्रतीत होती हुई परोक्ष सत्ता की एकता का आभास दिया था। प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सामने रखने की आवश्यकता बनी थी। वह जायसी द्वारा पूरी हुई।"[7] ऐसे मुसलमान कवियों की दीर्घ परम्परा है जिसमें रहीम, रसखान, अनीस, कमाल, जमाल, जलासुद्दीन, ताज, नेवाज, आलम, शेख, मुबारक, रसलीन आदि शामिल हैं। दिनकर जी कहते हैं – "कबीर, दादूदयाल, जायसी और उस्मान इस पक्ष में है कि दोनों जातियों के लोग एक हो जाय यदि एक न हो सके तो, कम से कम, काफी नजदीक आ जाय। किन्तु दूसरी धारा के कहते हैं हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे से अलग रहे, इसमें आपत्ति की कोई बात नहीं है, लेकिन, एक दूसरे के धर्म में दखल नहीं देना चाहिए। विद्यापति, सूरदास, और तुलसीदास तथा कदाचित खानखानाँ रहीम, रसखान, मुबारक और रसलीन भी इसी पिछली धारा के पक्षपाती हैं।"[8] अपनी निश्छल श्रद्धा और हिन्दू संस्कृति के प्रति प्रगाढ़ता के बल पर ये मुसलमान कवि हिन्दुओं के प्रिय हो गये। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इन मुसलमान कवियों की हिन्दुओं के प्रति आस्था देखकर कह उठे – 'इन मुसलमान हरिजनन पर कोटिन हिन्दू वारिये।'

हिन्दू के भक्त कवियों ने भी सामाजिक–सांस्कृतिक समन्वय की दिशा में अपना योगदान दिया। इन कवियों ने मुसलमानों के विरूद्ध ऐसी कोई बात नहीं कही है जिससे यह पता चले कि वे मुसलमान के प्रति आक्रोश व्यक्त किया है। रहीम तुलसी एवं उनके 'मानस' से इतने अभिभूत थे कि उन्होंने 'रामचरितमानस' को हिन्दुओं का वेद और मुसलमानों का कुरान तक कह डाला– हिन्दुआन को वेद सम, तुरकहिं प्रगट कुरान।

अमीर खुसरो की परम्परा उर्दू साहित्य में भी विकसित हुई परन्तु देर से। उस समय के जितने फारसी के कवि थे वे फारसी में रचना करते थे जनभाषा खड़ीबोली में नहीं जिसे खुसरो ने हिन्दवी कहा था। उर्दू साहित्य को पनपने का अवसर दक्षिण भारत में मिला। एहतेशाम हुसैन ने लिखा है कि "यह युग उत्तरी भारत में मलिक मुहम्मद जायसी, कबीर, तुलसी और सूर के प्रकाशमान होने का है, जिनकी अभिव्यक्ति की भाषा अवधी और ब्रज थी। खड़ी बोली अपने क्षेत्र से निकल कर उसी समय कुछ ऐतिहासिक कारणों से दक्षिण-भारत में अपने लिए एक स्थान बना रही थी।"[9] गोलकुण्डा का बादशाह मुहम्मद कुली कुतुबशाह 1580 ई० में गद्दी पर बैठा, वह उर्दू का महान कवि था। उनकी कविताओं में भारतीय जीवन का इन्द्रधनुषी रंग मिलता है। उन्होंने मुस्लिम त्योहारों के साथ–साथ हिन्दू त्योहारों पर भी कविताएँ लिखी। दक्षिण में ही 'वली', नाम के उर्दू कवि हुए हैं जिसे कुछ लोग उर्दू काव्य का 'बाबा– आदम' भी कहते हैं। उनकी कविताओं में भी गंगा, यमुना, राम कृष्ण, सीता, लक्ष्मी के नाम बार–बार आते हैं। उत्तर भारत में अठारहवीं सदी में इस परम्परा के महत्त्वपूर्ण कवि हुए हैं – फ़ाइज। इन्हें उत्तर भारत का पहला उर्दू कवि माना जाता है। इनका पूरा नाम सदरुद्दीन मुहम्मद था। फ़ाइज ने भी अपनी कविताओं में हिन्दू धर्म के त्योहारों तथा महात्माओं का सुन्दर वर्णन किया है। परन्तु इसी समय उर्दू में ऐसे कवि का आगमन होता है जिसकी समन्वयवादी दृष्टि के हम सब कायल हैं। वे है 'नज़ीर अकबराबादी। उनका पूरा नाम बली मुहम्मद था। एहतेशाम हुसैन ने उनकी महत्ता को देखते हुए अपने इतिहास में अलग से अध्याय जोड़ा है– "नज़ीर अकबरावादी और एक विशेष परम्परा।" "नज़ीर अकबराबादी की जो कविता गंगा–जमुनी तहजीब मजबूत करती है उसका शीर्षक है – होली, होली की बहारें, बलदेव जी का मेला, दिवाली का सामान, राखी। इसके साथ ही वे गुरू नानक शाह, ईदुल फ़ित्र, ईदगाह अकबरावाद जैसी कविताएँ भी लिखते हैं। नज़ीर की कविता में लोकतत्व का संस्पर्श है जिसका अबतक उर्दू कविता में अभाव था। वे ख्यालात के नहीं वाकयात के कवि हैं। उनकी भाषा भी इस तरह है कि कहीं अर्थ-बोध में कठिनाई नहीं होती। उदाहरण के लिए 'होली की बहारें' कविता देखी जा सकती है–

"जब फागुन रंग झमकते हों तब देख बहारें होली की
और दफ़ के शोर खड़कते हो तब देख बहारे शैली की।"[10]

या 'बलदेव जी का मेला' कविता देखी जा सकती है–

"है कही राम और कहीं लक्ष्मन
कहीं कुछ मछ है और कही रावन
कहीं बारा कहीं मदन मोहन
कहीं बलदेव और कहीं है किशन
सब सरूपों में हैं उसी के जतन
कहीं नरसिंह है वह नारायण
कहीं निकला है सैर को बनठन
कहीं कहता फिरे हैं यूं बन बन
रंग है रूप है झमेला है
ज़ोर बलदेव जी का मेला है।"[11]

नज़ीर की उदारता तथा सहृदयता तथा उनके माध्यम से उर्दू साहित्य ने इस नई धारा की प्राजंलता पर एक हिन्दी के विद्वान ने लिखा है– ".....उस शुष्क और उजाड़ संगम पर आकर 'नजीर' ने अज़ान भी दी और शंख फूका। तसबीह भी ली और जनेऊ भी पहना। मुहर्रम में रोये, तो होली में भड़ुवे भी बने। रमज़ान में रोजे रखे और सलूनों पर राखी बाँधने को मचल पड़े। शब्बरात पर महताबियाँ छोड़ी तो दीवाली पर दीये सजाये। नबी, रसूल, वली, पीर, पैगम्बर के लिए भी भर के लिखा, तो कृष्ण, महादेव, नरसी, भरौं और नानक पर भी श्रद्धांजलि चढ़ायी।"[12] साधारण जनता से उनका घनिष्ठ संबंध था परिणाम स्वरूप उनके यहाँ ऊँच–नीच हिन्दू–मुस्लिम, बड़े–छोटे का भेदभाव मिट गया था।

नज़ीर अकबरावादी की परम्परा आगे बढ़ी और इसीलिए जागरण काल में मौलाना आजाद ने एक मुशायरा में व्याख्यान दिया जिसमें उन्होंने कहा कि कविता में हम कोयल, चम्पा–चमेली और भीम अर्जुन गंगा–जमुना हिमालय आदि को बिल्कुल भूल गये हैं। उसकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।

दिनकर भी कहते हैं – वह हिन्दू अन्य हिन्दुओं से श्रेष्ठ है जो अपने धर्म के सिवा इस्लाम पर भी श्रद्धा रखता है। और वह मुसलमान भी अन्य मुसलमानों से श्रेष्ठ है जो अपने मजहब के सिवा हिन्दू–धर्म का भी सम्मान करता है। परन्तु सच्चाई है कि हिन्दू–मुस्लिम संबंध का प्रश्न वर्तमान में कठिन दौर से गुजर रहा है। धर्म की राजनीति ने हमारे संत–महात्माओं, सूफ़ी संतों, प्रेममार्गी कवियों, शायरों द्वारा अर्जित मूल्यों को, परमपराओं को कमजोर करने का प्रयास किया है। ऐसी संकट की घड़ी में अमीर खुसरो और नज़ीर अकबराबादी परम्परा को आगे बढ़ाने वाले कवि और शायर पहले से अधिक प्रासंगिक हो उठे हैं।

संदर्भ–सूची

1. संस्कृति के चार अध्याय, लेखक– रामधारी सिंह दिनकर पृ० 278
2. उद्धृत, अमीर ख़ुसरो, लेखक– प्रदीप शर्मा ख़ुसरो, साक्षी प्रकाशन दिल्ली–110032, पृ० 171
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, लेखक– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली–02, पृ० 59
4. संस्कृति के चार अध्याय पृ० 275
5. वही, पृ० 276
6. वही, पृ० 283
7. त्रिवेणी, लेखक– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, अनन्य प्रकाशन दिल्ली–32, पृ० 8
8. संस्कृति के चार अध्याय, पृ० 290
9. उर्दू–साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, लेखक– एहतेशाम हुसैन, प्रकाशन– लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज – 211 001, पृ०-21
10. नज़ीर अकबराबादी, संकलन, संपादन एवं अनुवाद– इब्ने कंवल, प्रकाशन– राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, संस्करण– 2014, पृ० 109
11. वही, पृ० 111–112
12. उर्दू–साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, लेखक– एहतेशाम हुसैन, उद्धृत पृ० 99
13. संस्कृति के चार अध्याय, पृ० 293